57. सम्बुद्धौ शाकल्यस्येतावनार्षे — 1|1|16

यह प्रगृह्य संज्ञा विधायक सूत्र है। इसका अर्थ है यदि वेद से भिन्न स्थान पर 'इति' का प्रयोग और वह सम्बुद्धि निमित्तक है तो विकल्प से उसकी प्रगृह्य संज्ञा होती है। यथा — विष्णो इति, विष्णु इति, विष्णविति।

(a) विष्णो इति — यह प्रकृति सूत्र से सम्बुद्धि निमित्तक तथा 'वेद' से भिन्न स्थान पर प्रयुक्त होने के कारण प्रगृह्य संज्ञक एवं प्रकृतिभाव वाला हुआ।

(b) विकल्प पक्ष में — 'एचोऽयवायावः' से 'विष्णविति' रूप बना

(c) 'वकार' का लोप भी विकल्प से ही होता है, जहाँ नहीं लोप होता है वहाँ 'विष्णविति' रूप बना।

58. मय उञो वो वा — 8|3|33

यह विधिसूत्र है। इसका अर्थ है यदि मय् प्रत्याहार में आने वाले ञकार को छोड़कर, सभी वर्णों के पश्चात स्वर वर्ण हो तो उसमें 'उञ्' विद्यमान हो तो 'उ' के स्थान में विकल्प से 'व' आदेश हो जाता है। यथा - किम् + उ + उक्तम् किम् + व + उक्तम् — किम्वुक्तम्। विकल्प पक्ष में जहाँ वकारादेश नहीं होगा वहाँ — किमु उक्तम् रूप बनता है।

59. इकोऽसवर्णे शाकल्यस्य ह्रस्वश्च — 6|1|127

यह विधिसूत्र है। सूत्र का अर्थ है - पद के अन्त में आनेवाले इक् (इ, उ, ऋ, ऌ) के बाद यदि असवर्ण स्वर वर्ण हो तो उसका विकल्प से ह्रस्व हो जाता है। यथा — चक्री + अत्र — चक्रिअत्र, चक्र्यत्र। (चक्र्यत्र में विकल्प से यण् संधि हुआ।

(b) वाप्यश्वः — वापी + अश्वः — यहाँ पर 'न समासे' से निषेध होकर 'इको यणचि' से यण संधि हुई।

Uma Paswan
Dept. of Sanskrit
B.A (Sh) III Yr.

Scanned with CamScanner

55. निपात एकाजनाङ० - 1।1।14

यह प्रगृह्य-संज्ञा विधायक सूत्र है। इसका अर्थ है - एकाच् (एक-अच् निपात ग्यारह हैं - आक्षेप अर्थ में - अ, वाक्य और स्मरण अर्थ में - आ, सम्बोधन और विस्मय अर्थ में - इ, ई, सम्बोधन, वितर्क - उ, सम्बोधन में - ऊ, ए, ऐ, ओ - औ - सम्बोधन अर्थ में, अल्प मर्यादा आदि के अर्थ में - आङ्) में 'आङ०' को छोड़कर शेष दस की प्रगृह्य संज्ञा इस सूत्र से होती है।

'प्लुत प्रगृह्या अचि नित्यम्' से इनका प्रकृतिभाव हो जाता है। यथा - इ इन्द्रः, उ उमेशः।

प्रायः 'आ' और 'आङ०' का प्रयोग 'आ' के रूप में ही होता है यह आङ् प्रगृह्य संज्ञक नहीं० होने के कारण संधि हो जाती है।

'आ' एवं किल तत् - इस वाक्य में 'आ' स्मरण अर्थ में प्रयुक्त हुई, अतः यहाँ प्रगृह्य संज्ञा और प्रकृतिभाव दोनों होता है।

वाक्य और स्मरण अर्थ से भिन्न 'ओञ्जम' ईषत् अल्प अर्थ में है, इसलिए 'आङ्' की प्रगृह्य संज्ञा और प्रकृतिभाव न होकर 'आद् गुणः' से गुण एकादेश होने पर 'ओञ्जम्' रूप सिद्ध होता है।

56. ओत् - 1।1।15.

यह प्रगृह्य संज्ञा विधायक सूत्र है। सूत्र का अर्थ है - ओकारान्त निपात प्रगृह्य संज्ञक होता है और उसका प्रकृतिभाव हो जाता है। यथा - अहो ईशाः, यहाँ पर 'एचोऽयवायावः' से 'ओकार' का 'अवादेश' होना चाहिए था, किन्तु प्रकृति संज्ञक होने के कारण प्रकृतिभाव हो जाता है। इस कारण 'अहो ईशाः' ही प्रयोग मिलता है।

Scanned with CamScanner